मूल्य 1 रूपया

कृषक समाचार

भारत कृषक समाज का मासिक मुख पत्र

वर्ष 59 | जून, 2014 | अंक 6

सभापति का पत्र :

वर्ष 2014 के भारतीय संसदीय चुनावों का परिणाम आ चुका है और जब मैं यह संपादकीय लिख रहा हूँ तो श्री नरेंद्र मोदी जी की अगुवाई में सरकार शपथ ले रही है। उनके नेतृत्व में 10 वर्ष तक प्रत्येक वर्ष 10 प्रतिशत की दर से गुजरात में कृषि वृद्धि हुई है। देश के किसानों को आशा है कि गुजरात की तरह ही देश के बाकी प्रदेशों में भी नए प्रधानमंत्री कृषि वृद्धि दर प्राप्त करने का प्रयास करेंगे।

हम भारत कृषक समाज की ओर से प्रार्थना करते हैं कि नई सरकार किसानों की आशाओं को पूरा करे। हम किसान अनुकूल नीतियों का भरपूर समर्थन करेंगे।

मीडिया में एक महत्वपूर्ण समस्या को नहीं उठाया गया है वह है ग्रामीणों द्वारा पालतू पशुओं को खुला छोड़ देना। इनसे भारत में किसानों के खेतों में तबाही मचती है। वे सभी किसान जो खर्च उठा सकते हैं, वे अपने खेतों के चारों ओर तार लगवा देते हैं। चारा महंगा होने के कारण कोई भी सांड को पालना नहीं चाहता और केवल गाय ही पालना चाहते हैं। इस कारण पैदा होने वाले सांडों को गांव की गलियों में खुला छोड़ दिया जाता है और इससे न केवल लोगों के जीवन बल्कि फसल के लिए भी खतरा बना रहता है। भारत में सांडों को मारा नहीं जाता है इस कारण इनकी संख्या बढ़ती जाएगी। यदि आवारा सांडों के खतरे को बने रहने दिया तो वे उन्नति और समृद्धि में रूकावट बने रहेंगे। इसका समाधान प्राकृतिक गर्भाधान के समय लिंग निर्धारण में है। भारत में यह तकनीक उपलब्ध नहीं है किंतु इसे विदेशों से भारत में उपयोग के लिए खरीदा जा सकता है।

दूसरी समस्या है कि भारत में प्राकृतिक गर्भाधान की सेवाओं का अच्छा दर्जा नहीं है जैसा बागवानी पौध–शालाओं का होता है। इस कारण पशुओं की उत्पति (संतान) की गुणवत्ता अच्छी नहीं हो पाती और प्रति पशु से कम दूध मिलता है।

तीसरी समस्या है कि इन सबके परिणामस्वरूप देसी नस्लों की समाप्ति होती जा रही है। नस्लों की प्रजातियों का दर्जा घटता जा रहा है। गाय एक बहुत पवित्र जीव है,

विशेषकर भारतीय जनता पार्टी की विचारधारा में, और हम नई सरकार से आशा करते हैं कि वह इस समस्या का समाधान करेगी। हमारी हार्दिक शुभकामनाएं नई सरकार के साथ हैं।

– अजय वीर जाखड़
अध्यक्ष, भारत कृषक समाज

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

कृषि क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा

*** बिबेक देबरॉय**

राष्ट्रीय आय के खातों में, क्षेत्रों का साधारण वर्गीकरण है जैसे प्राथमिक, द्वितीय और तृतीय। हम प्राथमिक उत्पादों और कृषि उत्पादों की व्याख्या सीमित और विस्तार दोनों रूपों में करेंगे। हम इसे सीमित वर्ग में इसलिए रखेंगे क्योंकि हमने वन उपजों और मछली पालन को छोड़ दिया। किंतु, हम विस्तार में भी करेंगे क्योंकि हमने न केवल कृषि, जैसा राष्ट्रीय खाते के प्रयोजन के लिए परिभाषित किया बल्कि उपकरणों (बीज, उर्वरक, कृषि रसायन, जैव तकनीकी), प्रसंसाधन, भंडारण, व्यापार और वितरण को भी शामिल करेंगे। इस मुद्दे को उठाना इसलिए आवश्यक है क्योंकि सामान्य संतुलन के सिद्धांत का अर्थ एक प्रतिस्पर्धात्मक बाजार है और प्रतिस्पर्धा अनुमान लगाना है। एक ऐसे क्षेत्र को देखते हुए जहां पर अनुमान कुछ सीमा तक सच हो सकते हैं, कोई भी व्यक्ति कृषि क्षेत्र का ही मुद्दा प्रायः उठाता है। यह सत्य नहीं है। आपूर्ति चेन में अन्य पहलुओं के अतिरिक्त, कृषि क्षेत्र में घरेलू और विदेशी निवेश तथा घरानों के प्रवेश सहित, वास्तव में उत्पादन प्रकिया के लिए भी यह सत्य नहीं है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मोल–भाव, बहुपक्षीय, क्षेत्रीय और द्विपक्षीय में कृषि और प्रतिस्पर्धा नीति दोनों का उल्लेख है। इन वार्तालापों में देशों की भागीदारी होती है, इस कारण विदेशी उपायों पर ध्यान केंद्रित किया गया है। किंतु, प्रतिस्पर्धा में बाधाएं अनिवार्य रूप से विदेशी नहीं हैं। वास्तव में, कृषि जैसे क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा विरोधी आंतरिक नीतियां हैं और प्रायः ये सरकारी नीतियां होती हैं जो प्रतिस्पर्धा में रूकावट डालती हैं। ये सरकारी कागजी दस्तावेज बाजार के परिणाम और उत्पादन में हस्तक्षेप करते हैं जिस कारण भारतीय कृषि में प्रतिस्पर्धा नहीं हो पाती और अन्य विकासशील देशों में भी ये समान रूप से विद्यमान हैं। कुछ उदारीकरण होने से, प्रतिस्पर्धा नीति ने कृषि वितरण चेन के कुछ पहलुओं पर ध्यान देना आरंभ कर दिया है जिनके अंतर्गत निजी क्षेत्र शामिल होते हैं। यह अति महत्वपूर्ण है, पूर्ण प्रतिस्पर्धा के लिए उस सरकारी हस्तक्षेप को समाप्त करने की आवश्यकता है जिससे प्रतिस्पर्धा में रूकावट आती है।

बहुपक्षीय, क्षेत्रीय या द्विपक्षीय व्यापार मोलभाव भी कृषि बाजार में सुधार करने का उत्तम साधन हो सकता है। किंतु इस मुद्दे को खाद्य सुरक्षा पहलू से जोड़ दिया गया है। एक स्तर पर खाद्य सुरक्षा के कारण भुगतान संतुलन की समस्या होती है, जैसे खाद्य आयात की

आवश्यकता हेतु एक देश की भुगतान करने की क्षमता। किंतु, सामान्य रूप में, खाद्य सुरक्षा को एक धर के प्रत्येक व्यक्ति को अनाज देने के रूप में परिभाषित किया गया है या अनाज की कमी अथवा भीषण अकाल पड़ने की स्थिति में अनाज देना।

खाद्य सुरक्षा का मुद्दा महत्वपूर्ण हो चुका है क्योंकि कृषि क्षेत्र में अधिकतम लोग जैव तेल के उत्पादन में लग गए हैं, क्योंकि विश्व में तेल के भाव बढ़ चुके हैं और जनसंख्या वृद्धि भी एक मुद्दा है, कृषि भूमि शहरीकरण और औद्योगिक विकास हेतु उपयोग की जा रही है, जलवायु परिवर्तन का भी प्रभाव है, भूमि की उर्वरता कम हो रही है और चीन तथा भारत जैसे देशों की उपभोग मांग बढ़ती जा रही है। इस कारोबार से लोग अलग भी हो रहे हैं, क्योंकि अधिक खाद्य मूल्यों से उनकी आय बढ़ रही है जो अनाज बेचते हैं, जैसे की ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले। किंतु इनसे वास्तविक अनाज उपभोक्ता प्रभावित होते हैं, जैसे की शहर में रहने वाले गरीब लोग। वास्तव में खाद्य मुद्रा स्फीति कम होनी चाहिए और कृषि सुधारों में प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि मांग की आपूर्ति की जा सके। किंतु वास्तव में, इससे प्रायः लघु अवधि में विकार और राज्य हस्तक्षेप बढ़ता है। यह एक विकृति है। खाद्य मूल्य अधिक होने का मूल कारण दूर नहीं किया जा सकता। इस कारण आपूर्ति प्रतिक्रिया में कृषि सुधारों में सकारात्मक प्रतिस्पर्धा की आवश्यकता है।

विकास का सीधा संबंध उन लोगों की संख्या में कमी करने से है जो कृषि क्षेत्र में लगे हुए हैं। इसके मुकाबले में विश्व के अमीर देशों में लोग कृषि से अलग हो चुके हैं और अधिक उत्पादक गतिविधियों में शामिल हो चुके हैं। वास्तव में इस क्षेत्र में कई प्रकार की घटनाएं हो चुकी हैं। जो लोग कृषि में लगे होते हैं वे अनाजों के स्थान पर अन्य फसलों का उत्पादन करते हैं, जैसे बागवानी। इनमें वाणिज्यीकरण और विविधीकरण है। अन्य लोग संबंद्ध कार्यों में लग जाते हैं जैसे, मछली पालन, डेरी उद्योग, फूलों की खेती और कुक्कुट पालन और बाकी लोग भी कृषि कार्यों को छोड़कर गैर–कृषि कार्यों में लग जाते हैं जैसे ग्रामीण उद्योग और ग्रामीण सेवाएं। कृषि में रोजगार के इन आंकड़ों में सत्यता दिखाई देती है। सबसे पहले इनमें प्रधान और सहायक कार्यों का उल्लेख होता है जिसमें आशा होती है कि कृषि क्षेत्र को छोड़कर भी कई दूसरे व्यवसाय हैं। वास्तव में, भारत की अधिकतम कृषि मौसमी होती है, यही एक विशेष मामला है। दूसरा, राज्यों के बीच में पर्याप्त भिन्नताएं हैं और अलग–अलग राज्यों में कमी का अनुपात भी अलग है। तीसरा, लिंग भिन्नताएं भी हैं। सबसे पहले पुरूष खेती से गैर–खेती क्षेत्रों में जाते हैं और कृषि क्षेत्र में महिलाओं का भाग बढ़ जाता है। चौथे, जो लोग कृषि में हैं उनमें से दो–तिहाई (64 प्रतिशत) अपने आप को सेल्फ एंप्लाइड कहते हैं, अर्थात् वे किसान हैं। शेष एक–तिहाई (36 प्रतिशत) दिहाडी मजदूर हैं जो लगभग सभी केजुअल आधार पर होते हैं। पांचवा, ग्रामीण लोगों का 13.1 प्रतिशत भाग भूमिहीन है और केवल 11.2 प्रतिशत लोगों के पास मध्यम या कुछ बड़ी जमीन है, यह बड़ी जमीन दो हेक्टेयर से ही थोड़ी अधिक की हो सकती है। भूमि रखने वालों का 44.8 प्रतिशत भाग कम मझोला (0.01 – 0.40 हेक्टेयर), 18.7 प्रतिशत मझोला (0.41 से 1 हेक्टेयर) और 12.2 प्रतिशत छोटी जमीन (1 और 2 हेक्टेयर के बीच) वाले हैं। इस प्रकार की छोटी–छोटी कृषि भूमि के टुकड़ों से अर्थव्यवस्था बड़े पैमाने पर प्रभावित नहीं हो सकती और यह जीवन निर्वाह का स्तर है, जो अकुशल और लाभकारी

नहीं है। विकास करने के लिए इसमें कुशल होना और उत्पादकता के मूल्य बढ़ाने के प्रयास करने की आवश्यकता है।

लोग सदा अपना जीवन–स्तर सुधारना चाहते हैं तो कोई न कोई ऐसा कारण है कि लोग कृषि से गैर–कृषि क्षेत्रों में क्यों नहीं जा रहे और इसमें कई विकृतियां भी हैं जो नीति बनाने के कारण आई हैं। इन सभी के कारण प्रतिस्पर्धा नहीं हो पाती। उत्पादन बाजारों में इन नीतियों के कारण बाजार बंट जाते हैं या मूल्यों पर बुरा प्रभाव डालते हैं। सबसे पहले उत्पादन, विपणन और वितरण पर सरकारी बाधाएं वास्तव में हैं। ये बाधाएं अनिवार्य जिंस अधिनियम और कृषि उत्पाद विपणन एवं नियंत्रण अधिनियम के कारण आ रही हैं। अनिवार्य जिंस अधिनियम वर्ष 1955 में अस्तित्व में आया और इसे बनाने का प्रमुख कारण द्वितीय विश्व युद्ध के कारण अनाज की कमी होना था। यह एक कानून है, 'सामान्य लोगों के हित में कई जिंसों के व्यापार और कारोबार के बारे में उत्पादन, आपूर्ति और वितरण पर नियंत्रण करना।' वर्ष 1981 में अनिवार्य जिंस अधिनियम को और कड़ा बनाया गया जिसके लिए अनिवार्य जिंस (विशेष प्रावधान) अधिनियम बनाया गया जिसके अंतर्गत काला–बाजारी करने वालों और जमाखोरी करने वालों के विरूद्ध कार्यवाही का प्रावधान है। अनिवार्य जिंस अधिनियम कई उत्पादों पर लागू होता है, इनमें से अधिकतम कृषि क्षेत्र में हैं और इस अधिनियम के अंतर्गत आदेश दिए जा सकते हैं कि उत्पादन, आपूर्ति और वितरण पर नियंत्रण किया जाए और इसके क्षेत्राधिकार को बढ़ाकर मूल्य नियंत्रण पर भी लागू किया जा सकता है। इस कानून में ही कुछ जिंसों को 'अनिवार्य' के रूप में परिभाषित किया गया है। किंतु, यह इस अर्थ में व्यापक नहीं है कि केंद्रीय और राज्य सरकारें अन्य जिंसों को भी 'अनिवार्य' घोषित कर सकती हैं। अनिवार्य जिंस अधिनियम के कारण अनाज का व्यापार बिगड़ चुका है क्योंकि अनाज के भंडारण पर सीमाएं निर्धारित की हुई हैं। निजी व्यापारियों को किसी राज्य या जिले से भी अनाज बाहर लेकर जाना है तो अनुमति की आवश्यकता होती है। कई प्रकार की क्षेत्रीय बाधाएं भी हैं जिनके कारण बड़े–बड़े उत्पादक क्षेत्रों से निजी व्यापारियों द्वारा अनाज ले जाना मना है। दूसरे, अनाज के पक्ष में न्यूनतम समर्थन मूल्य और खरीद नीतियां भी हैं। इसका अर्थ है कि भारतीय खाद्य निगम के माध्यम से अनाज की खरीद करके बफर स्टॉक रखा जाता है और उपभोक्ताओं को वितरित करने के लिए खरीदा जाता है यद्यपि यह कार्य अकुशल सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से होता है। ऐसा करने से निजी व्यापारी इस कारोबार में प्रवेश नहीं करते और इससे उत्पादकों को भी बेहतर मूल्य नहीं मिल पाता। तीसरे, कृषि उत्पाद विपणन नियंत्रण अधिनियम भी है। साधारण रूप से कहें तो इस अधिनियम के अंतर्गत कृषि जिंसों की खरीद और बिक्री नियमित मंडियों के माध्यम से की जानी होती है जिसके लिए बाजार समितियों को निर्धारित शुल्क का भुगतान करना होता है। मार्केटिंग बोर्ड का गठन इस शुल्क का उपयोग ग्रामीण मंडियों के विकास के लिए करने के लिए होता है। यद्यपि शुल्क लिया जाता है किंतु, ग्रामीण मंडियों में कितना विकास या सुधार होता है ये सभी जानते हैं और इस पर बहस हो सकती है। कुछ ही मंडियों में शीत भंडारण और ग्रेडिंग सुविधाएं हैं। इसके अतिरिक्त, एक नियमित मंडी कई क्षेत्रों में अधिक दूर होती है लेकिन किसान के लिए यह बाध्यता है कि वह अपना माल नियमित मंडी के माध्यम से ही बेच सकता है, इससे भी किसानों को नुकसान पहुंचता है। जब तक इस अधिनियम में सुधार नहीं हो जाता तब तक

यह अधिनियम प्रत्यक्ष विपणन या ठेके पर खेती और निजी घरानों को इस कारोबार में शामिल होने से रोकता रहेगा। वित्तीय बाधाओं को सार्वजनिक व्यय में कमी माना जाता है, यह व्यय अनुसंधान और विकास तथा विस्तार सेवाओं में करना होता है। यह दिखाई देता है कि कहीं न कहीं बाजार की असफलता विद्यमान है। चौथे, सभी राज्यों में कृषि उत्पादों पर प्रत्यक्ष करों की समानता नहीं है। यह न केवल मूल्य संवर्धन कर (वैल्यू एडिड टैक्स) और वस्तुएं एवं सेवा कर (गुड्स एंड सर्विसिस टैक्स) ही है, बल्कि कई विशेष स्थानों पर प्रवेश कर भी देना होता है जैसे किसी नगर में या किसी नगर निगम क्षेत्र में प्रवेश करने के समय। पांचवे, अनिवार्य जिंस अधिनियम, कृषि उत्पाद विपणन समिति और राजस्व भिन्नताओं के कारण कई स्थानों पर वास्तविक चैक–पोस्ट्स हैं जो विनाशशील कृषि उत्पादों के लिए नुकसानदायाक हैं। इसके अतिरिक्त, ट्रकों की वास्तविक जांच होती है जिसके लिए पर्यावरण कानून की प्रशंसा करनी चाहिए जैसे भारतीय वन अधिनियम, वन (संरक्षण) अधिनियम और नियम, वायु (प्रदूषण निरोधक और नियंत्रण) अधिनियम एवं हानिकारक माइको ऑरगेनिज्म/जैनेटिकली इंजीनियर्ड ऑरगेनिज्म अथवा सैल्स के निर्माण, उपयोग, आयात, निर्यात और भंडारण नियम, जंगली जानवर संरक्षण अधिनियम और नियम तथा बायोमेडिकल वेस्ट (प्रबंधन और संचालन) नियम और मोटरवाहन अधिनियम एंव मिले जुले नियमों में समानता की कमी। समस्या बहुकार्यों की है न कि अनुमति या स्वीकृति की।

वास्तव में, इन उपरोक्त अधिनियमों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता है। प्रतिस्पर्धा में विश्वास न होना और निजी क्षेत्र की भी ऋण, बीमा और भूमि मंडियों के मामले में भिन्नता है। उदाहरण के लिए भूमि की जानकारी न होने का डर समझा जा सकता है। किंतु, इसमें यह स्पष्ट नहीं है कि भूमि को पट्टे पर देने के लिए बाजार क्यों नहीं खोले जाते अथवा भावी बाजार (फ्यूचर मार्केट) या प्रतिस्पर्धा के लिए रिटेल ट्रेड क्यों नहीं खोला जाता। केंद्र और राज्य के संबंधों पर एक कमीशन गठित किया गया था जिसने वर्ष 2010 में अपनी रिपोर्ट दे दी थी, इनमें से एक मुद्दे में सिफारिश की गई है कि कृषि उत्पाद में घरेलू मंडियों की समानता में कमी है। इसमें अनुपालन की अधिक लागत को उजागर किया गया है क्योंकि पहले से उल्लिखित पहलुओं और मंडियों में भिन्नता के कारण बड़े पैमाने पर अर्थव्यवस्था का स्तर और संघ (कार्टल) एवं एकाधिकार (मोनेपलीज़) की कमी होती है। इस अंतः रिपोर्टों में कृषि मंडियों के एकीकरण और समानता के बारे में निम्नलिखित आंकड़े दिए गए हैं–

- अनाज के लिए फसलोपरांत हानियों को 5–7 प्रतिशत कम करना और फल एवं सब्जियों के लिए 25–30 प्रतिशत कम करना;
- सभी राज्यों में कृषि उत्पादन के एक समान मानदंडों के माध्यम से 10 प्रतिशत की स्थिर वृद्धि;
- वितरण चेन की मध्यस्थता समाप्त करना, जिससे किसानों को अधिक मूल्य मिले और उपभोक्ता को कम मूल्य देना पड़े, 20 प्रतिशत तक की स्थायी कार्यकुशलता। किसानों के लिए 40 प्रतिशत और उपभोक्ताओं के लिए 60 प्रतिशत के अनुपात में कल्याण निधि का वितरण करना;

- राजस्व एकीकरण के परिणामस्वरूप 5 प्रतिशत तक अनुपालन लागत में बचत। 20 प्रतिशत तक की बचत हो सकती है यदि संपूर्ण और एकीकृत जीएसटी विद्यमान हो और 25 प्रतिशत राजस्व की प्राप्ति होगी। कर/जीडीपी का अनुपात 1 प्रतिशत तक बढ़ जाएगा।
- 30 प्रतिशत तक परिवहन लागत में कमी।
- केवल स्थिर प्राप्ति के कारण कृषि और संबद्ध कार्यों में 2 प्रतिशत की वृद्धि;
- केवल अंतर्राज्यीय बाधाओं को हटाने से 1 प्रतिशत की स्थिर जीडीपी वृद्धि;
- यदि व्यापक कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों में सुधार किया जाए तो 2 प्रतिशत की वृद्धि हो सकती है।
- एक वर्ष में 50 लाख लोगों को प्रत्यक्ष रोजगार मिल सकता है। यदि अप्रत्यक्ष रोजगार भी शामिल कर लें, तो एक वर्ष में 1 करोड़ 20 लाख अतिरिक्त रोजगार जुटाया जा सकता है।

इस रिपोर्ट में अपनाए गए आदर्शों और विशेष संख्या के बारे में कोई भी टालमटोल कर सकता है। किंतु, घरेलू बाजार के उत्पादन में प्रतिस्पर्धी विरोधी नीतियों को अपनाने की प्यास रहेगी। भारत के लिए एक राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा नीति का मसौदा तैयार कर लिया गया है। इसमें कहा गया है कि, 'यह देखा गया है कि राज्य स्तरों पर कतिपय नीतियां और कानून भारत में मंडियों को बनावटी रूप से विभाजित कर देती है। नीतियां और कानून, जो देश की अधिकतम जनसंख्या पर लागू होते हैं, जैसे कृषि, बिजली आदि, इनसे पर्याप्त लाभ राष्ट्रीय बाजार में मिल सकता है और सभी क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धा आ सकती है।

आईऐ प्रमुख प्रश्न पर बात करें। यह कृषि और ग्रामीण क्षेत्र में निवेश है जिससे बाजार में किसानों के लिए प्रतिस्पर्धा हो सकती है और बिचौलियों की संख्या कम होगी। इस स्तर पर उत्पादकों का मूल्य पर नियंत्रण कई विकासशील देशों में लागू है। कई देशों में खाद्य मूल्य बढ़ाने से उपभोग क्षेत्र में हस्तक्षेप हो जाता है जिसमें मूल्य नियंत्रण, उपभोग पर आर्थिक सहायता, अनाज पर राहत, काम के लिए अनाज, नकद ट्रांसफर और उपभोग पर टैक्स हटाना। क्या यह राजस्व के अनुसार बने रह सकते हैं ? क्या ये और विकृतियां पैदा करेंगे ? क्या इनसे आपूर्ति का समायोजन होगा अथवा वे इस पर कड़ी प्रतिक्रिया देंगे। एक उदाहरण लीजिए कई देशों में न्यूनतम समर्थन मूल्य कृषि जिंसों के लिए बढ़ाया गया है। इसके अंतर्गत खाद्य मूल्य की मुद्रा स्फीति पर पैसा दिया जाता है जिससे उत्पादकों को मिलने वाला मूल्य बढ़ता है और इस आर्थिक सहायता का बोझ उपभोक्ताओं पर नहीं डाला जाता, इस कारण वित्तिय बोझ बढ़ रहा है। न्यूनतम समर्थन मूल्य योजना सदा सभी कृषि जिंसों पर नहीं दी जाती और सभी जिंसों की सार्वजनिक खरीद की आवश्यकता भी नहीं होती, इस कारण मूल्य में विकृति आती है और संसाधनों का आबंटन भी प्रभावित होता है। नीति विकृतियों को कम करने के लिए क्या सरकारी नीतियां किसानों को मिलने वाले मूल्य और उपभोक्ताओं द्वारा दिए जाने वाले मूल्य के बीच में बिचौलियों को प्रोत्साहित करती हैं ? सरकारी नीति में

एकाधिकार और कार्टल्स शामिल नहीं हैं, किंतु वे विद्यमान रहते हैं, क्या प्रतिस्पर्धा नीति से इनका समाधान होगा ?

कृषि में प्रतिस्पर्धा केवल खेत से खाने की मेज तक आपूर्ति चेन पर ही लागू नहीं है, बल्कि यह उपकरण बाजार के लिए भी है। इनके उदाहरण बीज, कीटनाशक, फफूंदनाशक, कृषि रसायन और उर्वरक हैं। बिजली और पानी को भिन्न वर्ग में रखा जा सकता है। इस प्रकार यह मुद्दा काफी साधारण है। कृषि उपकरणों के लिए संसाधनों की आवश्यकता होती है जिन्हें निजी क्षेत्र तेजी से उपलब्ध करा रहा है। क्योंकि वे संसाधन और अनुसंधान के क्षेत्र में होते हैं इस कारण इनके प्रवेश में बाधाएं हैं और संपूर्ण बाजार के ढांचे को समझा जा सकता है। अनुसंधान और विकास का कार्य सुनिश्चित करने के लिए और इसकी ऊंची लागत की पूर्ति करने के लिए, स्थायी कार्यकुशलता और डायनामिक कार्यकुशलता के बीच संतुलन बनाने के लिए बौद्धिक संपदा अधिकार प्रदान किए जाते हैं जिस कारण एकाधिकार मजबूत होता है। अतः प्रतिस्पर्धा नीति में इन मुद्दों का समाधान होना चाहिए।

यह एक उचित बिंदु है किंतु कई अन्य समस्याएं भारतीय स्थिति को कठिन बना देती हैं। सामान्य रूप में बिजली, पानी, बीज और उर्वरक पर आर्थिक सहायता से विकृतियां उत्पन्न होती हैं। उर्वरक के मामले में यह उर्वरक नियंत्रण आदेश 1985 के माध्यम से कार्य करता है जो उनका मूल्य, वितरण और आयात नियंत्रण करता है। पोटाश से बनी हुई उर्वरक का पूरा आयात किया जाता है। पशुचारा और पोटाश तथा फास्फेट की कच्ची सामग्री आयात की जाती है। यूरिया के लिए प्राकशतिक गैस और एलएनजी आयात की जाती है। अतः आयात (गैस, यूरिया, अमोनिया, फास्फोरिक एसिड़, रॉक फास्फेट, सल्फर, डीएपी, एमओपी को छोड़कर) और आयातित उपकरणों के मूल्य पर सरकारी नियंत्रण है। एक कठिन मूल्य योजना के माध्यम से किसानों द्वारा दिए गए अधिकतम खुदरा मूल्य (एमआरपी) और खेतों पर उर्वरकों की लागत के अंतर को उर्वरक कंपनियों में आर्थिक सहायता के रूप में भुगतान किया जाता है। इस प्रकार यूरिया, डीएपी, एसएसपी या एमओपी जैसे उत्पादों में विभिन्न उर्वरक कंपनियों के बाजार भाग का विश्लेषण करने से यह नजर आता है कि इससे मुख्य मुद्दा छूट गया है यह कार्य सरकारी नीति द्वारा उत्पन्न विकशतियों में से एक है। इसके अतिरिक्त, किसानों को वितरण करने का चैनल भी उर्वरक कंपनियों को सीधी बिकी नहीं करता है बल्कि डीलरों और वितरकों के माध्यम से बांटता है। यही वितरण की पद्धति बीजों पर भी लागू होती है। उर्वरक, बीजों पर ऐतिहासिक नियंत्रण वर्ष 1966 के बीज अधिनियम, 1983 के बीज नियंत्रण आदेश और वर्ष 1988 के बीज नीति के माध्यम से किया जाता था। वर्ष 2002 की राष्ट्रीय बीज नीति के माध्यम से इसमें उदारता लाई गई और औद्योगिक लाइसेंस तथा एफडीआई के प्रतिबंध को समाप्त कर दिया गया। सार्वजनिक क्षेत्र के होते हुए भी बीजों के क्षेत्र में निजी क्षेत्र ने अपनी उपस्थिति बढ़ाई और निजी क्षेत्र में ही विलय और अधिग्रहण भी हुआ है। बौद्धिक संपदा अधिकार और अच्छी किस्म के बीजों की फसल पर वार्तालाप करना तो ठीक है किंतु बीज कंपनियों और किसानों के बीच वितरण चैनल का प्रमुख मुददा छूट जाता है। जैसा कि उत्पादन बाजार के मामले में है कि वितरण चेन का संपर्क उनसे है जहां पर सीमित मात्रा में अनुसंधान होता है और प्रतिस्पर्धा नीति हस्तक्षेप पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है।

RNI No. 831/1957
पोस्टल रजि० DL (S)-01/3092/2012-14
पहले भुगतान किये बिना पोस्ट करने का लाइसेंस नं०
U(C)-92/2012-14

प्रकाशन की तिथि : 1 जून, 2014
नई दिल्ली पी.एस.ओ, नई दिल्ली-2
तारीख 4 एवं 5, जून 2014

भारत में विकास के लिए यह आवश्यक है कि कृषि क्षेत्र से गैर कृषि क्षेत्र में ध्यान दिया जाए और कृषि क्षेत्र में ही अनाज के उत्पादन पर भी ध्यान दिया जाए। इसके लिए कृषि क्षेत्र में और साथ ही ग्रामीण रोजगार अवसर उत्पन्न करने के लिए वाणिज्यीकरण और विविधीकरण की आवश्यकता है। अतः एक कृषि सुधार का एक एजेंडा है और दूसरा ग्रामीण सुधार का है जो कृषि से आगे जाता है। कृषि क्षेत्र के अंतर्गत ही कई मुद्दे हैं जैसे कृषि में कार्पोरेट क्षेत्र के आने की अनुमति, उत्पादन, विपणन और वितरण पर लगाई गई सरकारी बाधाओं को हटाना, आधारभूत और विस्तार सेवाओं के लिए, उत्पादन आर्थिक सहायता के लिए सार्वजनिक व्यय पर ध्यान देना, वितरण चेनों में मध्यस्थता हटाना, फारवर्ड मार्केट, ठेके पर खेती में मध्यस्थता हटाना एवं ऋण और बीमा में सुधार करना तथा भूमंडियों को फ्री करना। इन सभी का संबंध वाणिज्यीकरण और विविधीकरण को प्रोत्साहित करने से है। यहां एक अन्य मुद्दा भी है कि कृषि से बाहर रोजगार को प्रोत्साहित करना, यहीं पर ग्रामीण क्षेत्र में अधिक सुधार करने की आवश्यकता है जिसके लिए वास्तविक और सामाजिक आधारभूत सुविधाओं का प्रावधान करना होगा।

विभिन्न क्षेत्रों में वर्ष 1991 से प्रतिस्पर्धा के कारण सफलताएं मिली हैं, किंतु कृषि क्षेत्र में समस्या यह है कि कृषि में प्रतिस्पर्धा न के बराबर है। इसके परिणाम स्वरूप जो लोग कृषि से आजीविका कमाते हैं उन्हें भी लाभ नहीं मिलता। हमें मनरेगा (महात्मा गांधी नेशनल रूरल एंप्लाइमेंट गारंटी स्कीम) पर बहस नहीं करनी चाहिए जबकि उसमें भी कई कमियां हैं और वहां भी भ्रष्टाचार है तथा इससे उत्पादन परिसंपत्ति अर्जित नहीं हो रही है। इसके स्थान पर हमें पूछना है कि स्वतंत्रता के कई दशकों के पश्चात भी हमें ऐसी गारंटी योजनाओं की क्यों आवश्यकता है ? इसका उत्तर है कि सरकारी नीतियों से उत्पन्न विकृतियों ने कृषि क्षेत्र का विकास रोक दिया है। एक उदाहरण है, 'उपरोक्त तथ्य से ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था बिल्कुल स्थिर है। किंतु पिछले कुछ दशकों में कुछ उल्लेखनीय उपलब्धियां पाई गई हैं। देश के बहुत बड़े क्षेत्र में वर्षा न होने के कारण भी सिंचाई की गई और देश के उत्पादन और व्यापार में नई फसलों ने उल्लेखनीय स्थान पाया है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में वित्तीय संसाधनों की बहुत कमी है, इस कारण कृषि के लिए वित्त उपलब्ध कराने का एक व्यापक कार्यक्रम प्रस्तावित है। 12वीं पंचवर्षीय योजना (वर्ष 2012–2017) दस्तावेज में इसका उल्लेख नहीं किया गया है बल्कि यह उल्लेख तो प्रथम पंचवर्षीय योजना (वर्ष 1951–56) के दस्तावेज में किया गया था। इसे हम अधिकतम कही गई बातों से अभी भी ऐसे जोड़ सकते हैं मानो जैसे आंखों देखा हाल सुनाया जाता है।

* **प्रोफेसर, सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च**

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

भारत कृषक समाज ए–1, निजामुद्दीन वेस्ट, नई दिल्ली– 110013, फोनः 011–24359509, 65650384, ई–मेलः contact@bks.org.in, वैबसाईटः www.farmersforum.in के लिए श्री उरविन्द्र सिंह भाटिया द्वारा सम्पादित, मुद्रित व प्रकाशित तथा एवरेस्ट प्रेस, ई 49/8 ओखला इण्डस्ट्रीयल एरिया, फेस –2, नई दिल्ली –110020 द्वारा मुद्रित।